Saarth
E-Journal of Research
ISSN NO: 2395-339X

गीतामें प्रबोधित पर्यावरण की भावना

प्रा. डो. तेजनी मुनशी*

प्रत्येक धर्म के मुख्यरूप से चार पक्ष होते है। कर्मकाण्ड पक्ष या अनुष्ठानपक्ष, पुराणपक्ष, योगपक्ष तथा दर्शनपक्ष कर्मकाण्ड धर्म का आधार हैं, पुराणपक्ष उस धर्म का अर्थवादमूलक आख्यान हैं। योगपक्ष आदर्श व्यावहारिक रूप है तथा दर्शनपक्ष सिद्धान्त है। जो जो धर्म चारों पक्षो के समन्वित रूप को धारण करता है, वह श्रेष्ठ मामरमान जाता है। तथा जिसमें इन चारों पक्षो का परस्पर साम्मज्जस्य नहीं, वह निश्चित ही श्रेष्ठ नहीं कहा जा सकता।

वैदिकधर्म और पूरा संस्कृत वाङ्मय चारो पक्षो से समन्वित है और इसमें कहीं भी विसंगति नहीं अत एव यह वैज्ञानिक है, हर युग के लिये कल्याणकारी है अत एव अनुकरणीय है तथा रक्षणीय है।

हमारे ऋषियों ने विश्व-ब्रह्मांड में एक वैज्ञानिक शाश्वत व्यवस्था की अनुभूति की थी, जिसे उन्होंने ऋत की संज्ञा दी थी यह ऋत ही सबका संचालन अथवा नियंत्रण करता है। देखने में ये तत्व अलग प्रतीत होते है किन्तु इनका परस्पर सापेक्ष समबन्ध है, ये एक दूसरे के पूरक है, भेदक नहीं। इसलिए सृष्टि प्रक्रियारूप यज्ञ में सबकी सहभागिक है। सूर्य, चंद्र आकाश, पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि आदि जितने भी देवतत्व है वे सभी सृष्टि-प्रक्रियारूप यज्ञ के संपादन में लगे है। इसके कर्म संपादन में एक निश्चित व्यवस्था है, सबके संरक्षण की कामना हो उसका परिणाम निश्चित ही श्रेयस्कर होगा। यह सृष्टि प्रक्रिया और कब तक चलता रहेगा। उसका कोई उतर नहीं दे सकता।1 स्वयं ऋग्वेद के ऋषिने अभिप्राय दिया है कि उनको समझ नहीं सकता। वैदिक कर्मकाण्ड एवं श्रीमद् भगवद्गीतामें बताया गया याज्ञिक कर्मकाण्ड सृष्टिज्ञान है उसमें कोइ संदेह नहीं है। पुरुष सुक्त में वर्णित सर्वहुत्यज्ञ सृष्टि प्रक्रिया का ही विषयन है।

'आर्षममहाकाव्य महाभारत के अंतर्गत गीता में भी नित्य प्राकृतिक यहा की अनुकृति पर संपादित होनेवाला देव-मनुष्य परस्पर भावनारूप वैध यज्ञ भी किस प्रकार नित्य ब्रह्मकी प्रतिष्ठा करता है।' इस जगत मैं अन्न ही प्राणियों का आधार है, सभी अन्न से उतपन्न होते है, अन्न रवाने से ही शरीरमें रक्त उतपन्न होता है, उसी से वीर्य बनता है और उसी से सन्तनोत्पति होती है। अन्न स्वयं पर्जन्य से उतपन्न होता है।

---

*प्रा.डो.तेजनीमुनशी ,एस.आर.महेता आर्टस कोलेज ,नवगुजरात केम्पस,आश्रमरोड,अहमदाबाद-14

Saarth
E-Journal of Research
ISSN NO: 2395-339X

यदि वृष्टि न हो तो अन्नादि औषधइयाँ उतपन्न ही न हो। अन्न को उतपन्न करनेवाला पर्जन्य स्वयं उतपन्न न होकर यज्ञ से उतपन्न होता है। 'यज्ञ पुनः कर्म से उतपन्न होता है। ब्रह्म अक्षर से उतपन्न होता है; इस प्रकार सर्वगत ब्रह्म नित्य यज्ञ में प्रतिष्ठित है।'2 यही चक्र सृष्टि को गतिमान किये रहता है। इसलिए विश्वव्यवस्था को संचालित करने मैं प्रवृत इस चक्र का जो अनुसरण नहीं करता वह पापात्मा स्वेच्छाचारी व्यर्थ में जीता है।3

"ये श्लोक में पर्यावरण और यज्ञचक्र में बताया गया है। सृष्टि पर चलते यज्ञकार्य का रहस्य इसमें समाविष्ट है। सकल जीव अन्न से पोषित होते है और अन्न वृष्टि से उतपन्न होता है। वृष्टि यज्ञ करने से ये बात पूरी वैज्ञानिक है"।

'ये सृष्टि पर नाइट्रोजन का चकरावा चलता रहता है। दो बादल जब एक दूसरे के साथ आपस में टकराते है तब नाइट्रोजन का विपुल जथ्था छूटता है और वनस्पति सृष्टि हवामें से और जमीन में से और सडे हुए द्रव्योमें से और खातर से प्राप्त करता है। प्राणी वनस्पति आरोगकर नाइट्रोजन प्राप्त करता है। इसी तरह उत्सर्ग के द्रारा प्राणीयों ने आरोगा हुआ नाइट्रोजन पृथ्वी को वापस मिलता है और नाइट्रोजन का चक्र चलता है। ये चक्र असंतुलित नहीं होना चाहिए। 'Law of Return' इसे ही कहते है। इसी के परिणामस्वरूप परस्पर सीम्बीओसीस संतुलित रहता है।'

'कृष्ण गीता में बताते है कि इसी तरह "परस्परं भावयन्तः" के व्यवहार से ही जीवनचक्र या सृष्टिचक्र चलता है।'4

'गीता के संतुलनशास्त्र (इकोलोजी)कतेके के बारे में चिंतन करना चाहिए।

'चीन में चकला मारने की दवा के झुंबेश के परिणामस्वरूप दुकाल हुआ ऐसा कहा गया है कि वो अन्न का उत्पादन कम हो ऐसे जीवजंतुओ को खा जाता है। प्रदुषण के कारण ही पर्यावरण की समतुला बीगड जाती है। रशिया के साइबीरीया में घास में हठ कीडी को मारने का शुरु हुआ और घास का उत्पादन कम हुआ1976-77 में अमरिका में भयंकर हिमप्रपात, 1970 ओस्ट्रेलिया में भयंकर गरमी, 1976 में ओस्ट्रेलिया में भयंकर बारिस हुआ। युद्ध की तैयारी के रूप में जो महासता ए विस्फोटक एवं मिसाइल्स बनाते है उससे हवामें प्रदुषण होता है। हाल ही में उतराखंड की दुर्घटना और सिरिया में रासायणिक हमला का दुष्परिणाम हम देख चुके है। कहने का तात्पर्य है कि प्रकृति के साथ किया हुआ दुर्व्यवहार संतुलन को बीगाडता ही है। पृथ्वी को भले ही माता के रूप में गिने लेकिन उसके साथ का व्यवहार पूतना जैसा ही है।

Saarth
E-Journal of Research
ISSN NO: 2395-339X

'गीता के चतुर्थ अध्यायमें यज्ञ का जो स्वरूप बताया है। वहाँ उसका अर्थविस्तार सांप्रत समय में समझना आवश्यक है।'

यहाँ 'यज्ञ' शब्द केवल अग्निहोत्र, दर्शपूर्णमास आदि ही नहीं जिसका उल्लेख मीमांसक करते है। यहाँ दान, तप, स्वाध्याय, ज्ञान, प्राणायाम, आत्मसंयम आदि सभी यज्ञ के नामसे व्यवहृत हो गये है।5

इसलिये यज्ञ के लिये प्रयुक्त प्रतीको के आधार पर ऐसा मानने में कोई विप्रतिपति नहीं कि गीता को यज्ञ का आध्यात्मिक एवं मनोवैज्ञानिक एवं कल्याणकारी स्वरूप अभिप्रेत था।'

'ब्रह्मयज्ञ का मतलब नवीनतम कल्याणकारी उच्च मानव केन्द्री विचारो का सेवन, प्रचार, प्रास है। देवयज्ञ में राग, अज्ञान, आलस, दौर्बल्य और भय पर विजय प्राप्त करता है, पितृयज्ञ में कुल परंपरा का संगोपन संवर्धन है। भूतयज्ञ में जीवमात्र के प्रति आदर और मनुष्ययज्ञ में मानव के गौरव की बात सांप्रत समयमें प्रासंगिक है।'

'आज के टेक्नोलोजी युग में हमारी हृदयशून्यता हो गई है। हम भूल गये है कि अन्न का एक दाना जब हम प्राप्त करते है तब उसमें किस किसका योगदान है!!! हम ऋणमुक्ति से भाव से अगर दूसरों के लिए कुछ भी न करे तो वह स्वयं पाप है।

'हम देखते है कि और समष्टि के बीच में व्यवहार में अभिप्रेरणा कि तीन कक्षाए देखने को मिलती है। प्रथम कक्षा में डार्विन ने दिखाया हुआ 'बलवान का बचाव'में सिद्धान्तरूप से स्पर्धा दिखाई पडती है। बडा मछली छोटी मछली को खाए ऐसे मत्स्यन्याय में से ही युद्ध, शोषण, गरीबी एवं साम्राज्यवाद का जन्म होता है। उदाहरण रूपमें दुनिया की कुल 6 टका वस्तीवाला देश पृथ्वी की उर्जा का 36% भाग वपराश में खा जाता है। ऐसे व्यवहार से समाज कभी सुख प्राप्त नहीं कर सकता।'

'दूसरी अभिरप्रेरणाकी कक्षा स्पर्धा नहीं सहकार है। Live Let Live इसमें भी कहीं कहीं स्वार्थवृति द्रष्टिगोचर होती है।

'तीसरी अभिप्रेरणा की कक्षा निःस्वार्थभाव से Live Let Live है। जीवन स्वयं यज्ञमय हो जाय!!! जगत को संतुलित रखने के लिए विश्वनिर्मित के सभी दृश्य-अदृश्य परिबलों ये ही हमारे देव यज्ञ का हार्द इसी में है। अग्नि में घी की आहुति देने से हमे अग्नि प्राप्त होती है। इसी तरह सब के प्रति समर्पणभाव रखकर हमे जीवन जीना चाहिए।'

'मनुष्य यज्ञकार्य के बाद भोजन कर वो यज्ञ शिष्ट अर्थात यज्ञ का बनाया हुआ भोजन प्रसाद की कक्षा प्राप्त करता है। गीता जिसको शरीरयात्रा कहती है वो तो चलती

Saarth
E-Journal of Research
ISSN NO: 2395-339X

रहती है किंतु यज्ञकर्म के अंत में प्राप्त हुआ भोजन(बाईबल) (जिसको ब्रेडलर कहता है) वो स्वयं यज्ञकर्म बनता है, शरीर की सुरक्षा अन्न ब्रह्म के द्वारा होती है। महाराष्ट्र के लोककवि ने कहा है कि'6

भुख में अन्न रखते समय
नाम लिजिए प्रभुका
सहज हवन होगा
नाम लिजिए प्रभुका
जीवन सजीवन करता है
ये अन्न है पूर्णब्रह्म
केवल उदरभरण नहीं है
जानीए ये है यज्ञकर्म।।

"यज्ञ को इस तरह कोस्मोलोजिकल संदर्भ में प्रस्तुत करने में कृष्ण की मौलिकता है। कृष्ण कहते है कि इसी तरह एक दूसरे का कल्याण करने से हि परम कल्याण को प्राप्त करता है।"7

'गीता लोकसंग्रह की भावना यही इकोलोजी के संदर्भ में प्रस्तुत की गई है। ब्रह्मा, विष्णु और महेश की त्रिमूर्ति सृष्टि के उत्पति स्थिति औरलय के साथ जुडी हुई है। सृष्टि का तमाम सर्जनात्मक परिबलो का संकेत ब्रह्मा सृष्टि का धारण, पोषण और सृष्टि के सकल विध्वसंक परिबलो का संकेत महेश्वर, सृष्टि के उत्पति के जवाबदार परिबलों के लिए मनुष्य लाचार है उसी तरह सृष्टि के प्रलय के और प्रलय के बीच में जो कोई कर्तृत्व है वो ही मानवजात को कल्याण के लिए करना चाहिए।' हमारा जीवन बहार से दिखता है वैसा पृथक नहीं है। 'प्रकृति ने सर्जी हुई व्यवस्था में हमे खलेल नहीं पहुँचाना चाहिए और हमारी और से जो खलेल पहुँचाती है उसे लोकसंग्रह की भावना से चुका देना चाहिए'8

अंत में परिणाम स्वरूप कृष्ण अभय वचन देते हुए कहते है कि यज्ञ से क्या हुआ अमृत का अनुभव करनेवाला सनातन ब्रह्म को प्राप्त करता है और यज्ञ न करनेवाले को इस मनुष्यलोक सुरवदायक नहीं है तो दूसरी (परलोक) में सुख की प्राप्ति कैसे होगी।9 भगवान कृष्ण ये भी कहते है कि 'क्रतु हूँ मैं ही यज्ञ मैं ही सर्वधा है, मैं ही द्रव्य हूँ मैं ही मंत्र हूँ, मैं ही धृत हूँ मैं ही अग्नि हूँ, सब कुछ मैं ही हूँ। मैं ही सभी यज्ञो का भोक्ता हूँ।

Saarth
E-Journal of Research
ISSN NO: 2395-339X

'तात्पर्य यही है कि होमहवन के बाह्याचारो में ही यज्ञ विभावना नहीं है। अपनी यज्ञप्रधान संस्कृति में से निष्पन्न इह जीवनदृष्टि का उतमोतम संकेत अर्थात् यज्ञ। शोषण युद्ध, कालबजार, भ्रष्टाचार, गृध्रवृति से पीडित आज की दुनिया को गीता द्वारा प्रबोधित यज्ञदृष्टि सुरक्षित कर सकती है।।

पादटीप:

1. को अध्या वेद का इद प्र वोचत्कुत आ जाता कुत इयं विसृष्टं।
अर्वाग्दा अस्य विसर्जनेनाथा को वेद यत आ बभूव।।
इयं विसृष्टिर्यत आवभूत यदि वा दधे यदि वा न यो
अस्याध्यक्षः परमे
व्योमन्तसो अङ्डा वेद वा न वेद।। ऋ-10 -123. 6-7,
ऋग्वेदसंहिता सायणभाष्यसहित वैदिक संशोधनमण्डल।
2. अन्नादं भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसंभवः।
यज्ञाद भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुदभवः।।
कर्म ब्रह्मोदभव विह्य ब्रह्माक्षरसमुदभवम् ।
तस्मासर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ।। गीता 3.14-15
श्रीमद्भगवद्गीता, गीताप्रेस, गोरखपुर.
3. एवं प्रवर्तितं यकं नानुवर्तयतीह यः।
अधायुरिन्द्रयारामो मोधं पार्थ स जीवति।।
4. देवान् भावयतानेने ते दैवा भावयन्तु वः।
परस्परं भावयन्तं श्रेयः परमवाप्स्यथ।।
गीता (तदैव) 11.
5. द्रव्ययज्ञस्तपोयज्ञा योगयज्ञास्तथापरे।
स्वाध्यायज्ञानज्ञास्य यतयः संशितव्रताः।
गीता (तदैव) 4.28
6. रांदेर के लोकसेवक श्रीकान्त आप्टेजी का अनुवाद
7. देवान्भावयातानेन ते देवा भावयन्तु वः।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ।। गीता (तदैव) 3-11

Saarth
E-Journal of Research
ISSN NO: 2395-339X

8. कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः।
लोकसंग्रहमेवापि संपश्यन्कर्तुमर्हसि।। गीता (तदैव) रू. 20

9. यज्ञशिष्टामृतमुजो पान्ति ब्रह्म सनातनम् ।
नायं लोकोडस्ययज्ञस्य कुतोडन्यः एतम।। गीता (तदैव) 4-31

10. अहं क्रतुरहं यज्ञः स्र्ववाहमहमौषर्वम् ।
मन्त्रोडहमेवाष्यमहमाग्निरहं हुतम् ।। गीता(तदैव) 9.16

11. अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता। गीता (तदैव) 9.24

संदर्भग्रंथ

1. ऋग्वेदसंहिता सायणभाष्यसहित, प्र. सरस्वती पुस्तक भंडार, अहमदाबाद.
2. श्रीमद्भगदगीता, प्र. गीताप्रेस, गोरखपुर
3. श्रीमद्भगवदगीता, प्र. इस्कोन ग्रुप
4. गीता प्रवचनो- विनोबाभावे